[2024] 11 एससीआर 1472 : 2024 आईएनएससी 928

कर्णाटक राज्य

बनाम

चंद्राशा

(आपराधिक अपील संख्या 2646/2024)

(26 नवंबर 2024)

[संजीव खन्ना, भारत के मुख्य न्यायाधीश, संजय कुमार एवं आर महादेवन*, न्यायमूर्तिगण]

विचारणीय मुद्दा

उत्तरदाता-सरकारी सेवक के विरुद्ध अवैध प्रतिफल की मांग तथा उसके पश्चात स्वीकृति के आरोप में भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 7 एवं धारा 13(1)(d) सहपठित धारा 13(2) के अंतर्गत दोषसिद्धि को निरस्त करने संबंधी उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश की शुद्धता के संबंध में मुद्दा।

शीर्ष टिप्पणियां

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 - धाराएँ 7, 13(1)(d), 13(2) एवं 20 - अवैध प्रतिफल - धारा 20 के अंतर्गत उपधारणा, यदि लागू हो - अभियोजन का मामला कि उत्तरदाता-सरकारी सेवक ने शिकायतकर्ता से उसके तथा उसके विद्यालय के अन्य तीन व्यक्तियों के समर्पित अवकाश वेतन के बिल के भुनाने हेतु रिश्वत राशि की मांग की तथा उसकी स्वीकृति की और उक्त राशि उत्तरदाता के कब्जे से बरामद हुई - उत्तरदाता की धारा 7 एवं धारा 13(1)(d) सहपठित धारा 13(2 के अंतर्गत दोषसिद्धि - तथापि उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति का आदेश - शुद्धता

* लेखक

अभिनिर्धारित: सक्षम प्राधिकारी से स्वीकृति आदेश प्राप्त करने के पश्चात अभियोजन ने उत्तरदाता के विरुद्ध कार्यवाही प्रारंभ की - यह सुरक्षित रूप से निष्कर्षित किया जा सकता है कि उत्तरदाता ने स्वेच्छा से मुद्रा नोट प्राप्त/स्वीकार किए थे तथा अभियोजन साक्षियों, जिसमें अन्वेषण अधिकारी का कथन भी सम्मिलित है, से यह सिद्ध होता है कि उत्तरदाता के कब्जे से रिश्वत राशि की मांग, स्वीकृति एवं बरामदगी हुई - अभियोजन ने उत्तरदाता के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को संदेह से परे सिद्ध कर दिया - उक्त कार्यवाही से पूर्व मांग का टेप रिकॉर्डर में अभिलेखन किया गया था - ऐसी परिस्थितियों में उत्तरदाता पर यह दायित्व था कि वह अभियोजन के मामले का खंडन करते हुए यह प्रतिपादित करे कि ₹2,000/- की प्राप्ति रिश्वत नहीं थी, बल्कि वैध शुल्क या ऋण की वापसी थी, चाहे वह अभियोजन साक्षियों के जिरह के माध्यम से हो या ठोस साक्ष्य प्रस्तुत करके - किन्तु वह ऐसा करने में असफल रहा और इसके विपरीत अभियोजन ने अपना मामला पूर्णतः सिद्ध कर दिया - इसके अतिरिक्त, धारा 13 की उपधारा (1) एवं (2) के प्रथम दो अंग यह स्पष्ट करते हैं कि प्रतिफल की पर्याप्तता, उपधारणा उत्पन्न करने के लिए अप्रासंगिक है - इसके अतिरिक्त, उपधारा (3) केवल न्यायालय को यह विवेकाधिकार प्रदान करती है कि यदि राशि अत्यंत नगण्य हो, जिससे भ्रष्टाचार का निष्कर्ष निकालना परिस्थितियों में उचित न हो, तो वह उपधारणा न निकाले - अतः यह कोई सामान्य नियम नहीं, बल्कि एक अपवाद है, जिसका प्रयोग न्यायालय तथ्यों एवं परिस्थितियों के अनुसार कर सकता है - वर्तमान तथ्यों में ऐसे विवेक के प्रयोग का कोई औचित्य नहीं है - उच्च न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्ति का निर्णय अवैध, त्रुटिपूर्ण एवं अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के प्रतिकूल है - उत्तरदाता के कब्जे से रिश्वत राशि की बरामदगी सिद्ध होने के पश्चात, उत्तरदाता द्वारा दिया गया स्पष्टीकरण, ठोस साक्ष्य के अभाव में, स्वीकार्य नहीं है - रिश्वत राशि की 'मांग' एवं 'स्वीकृति' संदेह से परे सिद्ध हो जाने पर, किसी भिन्न दृष्टिकोण की संभावना नहीं रह जाती; अतः उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण विकृत (perverse) है - परिणामतः उच्च न्यायालय का आदेश निरस्त किया जाता है तथा विचारण न्यायालय का आदेश पुनर्स्थापित किया जाता है। [पैरा 16, 19, 21-25]

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 - धारा 20 - धारा 20 के अंतर्गत उपधारणा कब लागू होती है - उपधारणा उत्पन्न करने हेतु प्रतिफल की पर्याप्तता की प्रासंगिकता:

अभिनिर्धारित: धारा 20 की उपधारा (3) में उल्लिखित प्रतिफल की नगण्यता, किए जाने या न किए जाने वाले कृत्य तथा मांगी गई राशि को पृथक-पृथक नहीं देखा जा सकता - प्रतिफल का मूल्य उस कृत्य के अनुपात में देखा जाना चाहिए जिसे किया जाना है या नहीं किया जाना है, अथवा अनुकूलता या प्रतिकूलता प्राप्त करने हेतु, ताकि यह न्यायालय को यह विश्वास दिला सके कि वह इतना नगण्य है कि भ्रष्ट आचरण की उपधारणा न की जाए - यह भी आवश्यक नहीं है कि केवल पर्याप्त/उच्च राशि की मांग होने पर ही उपधारणा की जाए - समग्र परिस्थितियों एवं साक्ष्यों का भी अवलोकन किया जाना आवश्यक है - धारा 20 तभी लागू होती है जब मांग और किए गए अथवा किए जाने वाले कृत्य के बीच कोई संबंध (nexus) न हो - किन्तु जब भुगतान की प्राप्ति या प्रतिफल प्राप्त करने के लिए सहमति का तथ्य सिद्ध हो जाता है, तब संबंध या पुष्टिकरण स्पष्ट हो जाता है और उपधारणा अप्रासंगिक हो जाती है - धारा 20 तब लागू होती है जब यह सिद्ध हो जाए कि लोक सेवक ने विधिक पारिश्रमिक के अतिरिक्त किसी प्रतिफल को स्वीकार किया है या उसे स्वीकार करने के लिए सहमति दी है, और उस स्थिति में यह उपधारणा होती है कि वह अधिनियम की धाराओं 7, 11 या 13(1)(b) के अंतर्गत वर्णित किसी कृत्य के लिए प्रेरणा या पुरस्कार के रूप में था। [पैरा 23]

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 - धाराएँ 7 एवं 13(1)(d) - लोक सेवक द्वारा रिश्वत लेने से संबंधित अपराध - लोक सेवक द्वारा आपराधिक कदाचार - धाराओं 7 एवं 13(1)(d) के आवश्यक अवयव - विवेचित। [पैरा 13]

दंड विधि - दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील - सामान्य सिद्धांत:

अभिनिर्धारित: दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में, यदि दो दृष्टिकोण संभव हों और अधीनस्थ न्यायालय ने अभियुक्त को दोषमुक्त किया हो, तो अपीलीय न्यायालय मात्र इस आधार पर दोषमुक्ति को निरस्त करने के लिए उचित नहीं होगा कि कोई अन्य दृष्टिकोण भी संभव है। [पैरा 24]

उद्धृत निर्णयजन्य विधि

कृष्णा राम बनाम राज्य राजस्थान **[2009] 4 एससीआर 457 : 2009 (2) क्राइम्स 337**; *ए. सुबैर बनाम राज्य केरल* **[2009] 9 एससीआर 1058 : (2009) 6 एससीसी 587**; *सी.एम. गिरिश बाबू बनाम सीबीआई* [2009] **2 एससीआर 1021 : (2009) 3 एससीसी 779 : (2009)**

2 एससीसी (आपराधिक) 1; *बी. जयराज बनाम राज्य आंध्र प्रदेश* **[2014] 4 एससीआर 554 : (2014) 13 एससीसी 55 : (2014) 5 एससीसी (आपराधिक) 543**; *नीरज दत्ता बनाम राज्य* **[2023] 2 एससीआर 997 : (2023) 4 एससीसी 731 : 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 1724** - संदर्भित।

अधिनियमों की सूची

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988; भ्रष्टाचार निवारण (संशोधन) अधिनियम, 2018; परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881; सामान्य उपबंध अधिनियम।

प्रमुख शब्दों की सूची

अवैध प्रतिफल; उपधारणा; रिश्वत राशि की मांग एवं स्वीकृति; सरकारी सेवक; स्वीकृति (अनुमोदन); समर्पित अवकाश वेतन के बिल का भुनाना; स्वीकृति प्रदान करने में प्रक्रियात्मक अनियमितता; प्रतिफल की मांग एवं स्वीकृति; संभावनाओं का प्राधान्य; अभियोजन द्वारा मामला संदेह से परे सिद्ध; दागी मुद्रा नोटों की बरामदगी; वैध शुल्क या ऋण की वापसी; लोक सेवक द्वारा विधिक पारिश्रमिक के अतिरिक्त किसी प्रतिफल को स्वीकार करना या उसे स्वीकार करने के लिए सहमत होना; भ्रष्टाचार का निष्कर्ष; दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील।

मामले की उत्पत्ति

आपराधिक अपीलीय अधिकारिता: आपराधिक अपील संख्या 2646 वर्ष 2024

कर्नाटक उच्च न्यायालय, कलबुर्गी द्वारा सीआरए संख्या 200105 वर्ष 2015 में दिनांक 16.02.2022 को पारित निर्णय एवं आदेश से उत्पन्न।

अधिवक्तागण

डी. एल. चिदानंद, अधिवक्ता – अपीलकर्ता की ओर से।
बसवप्रभु एस. पाटिल, वरिष्ठ अधिवक्ता, अनिरुद्ध संगानेरिया, ज्योतिर्मय चटर्जी, अधिवक्ता – उत्तरदाता की ओर से।

माननीय सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

<u>आदेश</u>

आर महादेवन, न्यायाधीश

1. प्रारंभ में, इस न्यायालय द्वारा स्वतंत्र सिंह बनाम हरियाणा राज्य1 (एससीसी पृष्ठ 17, पैरा 6) में की गई टिप्पणी का उल्लेख करना उपयुक्त होगा, जो इस प्रकार है:

"6..... भ्रष्टाचार शरीर-राजनीति की जीवनदायिनी नसों को, कैंसरग्रस्त लसीका ग्रंथियों की भाँति, क्षीण कर रहा है, सार्वजनिक सेवा की दक्षता के सामाजिक ताने-बाने को नष्ट कर रहा है और ईमानदार अधिकारियों का मनोबल गिरा रहा है। सार्वजनिक सेवा में दक्षता तभी सुधरेगी जब लोक सेवक अपनी निष्ठापूर्ण ध्यान दे, कर्तव्यों का परिश्रमपूर्वक, सत्यनिष्ठा एवं ईमानदारी से पालन करे तथा अपने पद के कर्तव्यों के निर्वहन में पूर्णतः समर्पित रहे। भ्रष्ट होने की बदनामी किसी अधिकारी के आचरण के चारों ओर घने और अपरिहार्य बादलों की भाँति छा जाती है और धुएँ की तुलना में कहीं अधिक तीव्रता से कुख्याति अर्जित करती है।"

2. यह राज्य द्वारा दायर अपील है, जो कर्नाटक उच्च न्यायालय, कलबुर्गी पीठ2 द्वारा आपराधिक अपील संख्या 200105 वर्ष 2015 में दिनांक 16.02.2022 को पारित अंतिम निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध है।

3. विवादित निर्णय द्वारा, उच्च न्यायालय ने विशेष वाद संख्या 586 वर्ष 2010 में प्रधान सत्र न्यायाधीश, कलबुर्गी3 द्वारा दिनांक 13.10.2015 को पारित दोषसिद्धि के आदेश को निरस्त कर दिया तथा इस प्रकार वर्तमान उत्तरदाता को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 4 की धारा 7 एवं धारा 13(1)(d) सहपठित धारा 13(2) के अंतर्गत दंडनीय आरोपों से दोषमुक्त कर दिया।

4. अभिलेखों से प्रतिपादित अभियोजन का मामला निम्नलिखित है:

एक सुभाषचंद्र एस. अलूर (पी.डब्ल्यू.1), जो महंतपुरा चिनामगेरा ग्राम, अफजलपुर तालुक, कलबुर्गी जिला स्थित श्री महंतेशवर हाई स्कूल में द्वितीय श्रेणी सहायक के रूप में कार्यरत थे,

---

1. (1997) 4 एससीसी 14 : 1997 एससीसी (एल एंड एस) 909

2. आगे संक्षेप में "उच्च न्यायालय" के रूप में संदर्भित किया जाएगा।

3. आगे संक्षेप में "विचारण न्यायालय" के रूप में संदर्भित किया जाएगा।

4. संक्षेप में "अधिनियम" कहा जाएगा।

ने दिनांक 05.08.2009 को एक शिकायत (Ex. P1) प्रस्तुत की, जिसमें आरोप लगाया कि अपने तथा अपने विद्यालय के तीन अशैक्षणिक कर्मचारियों के समर्पित अवकाश वेतन के भुनाने हेतु बिल तैयार करने के पश्चात, उन्होंने उक्त बिल को ब्लॉक शिक्षा अधिकारी, अफजलपुर के निर्देशानुसार दिनांक 29.07.2009 को उप-कोषागार कार्यालय, अफजलपुर में प्रस्तुत किया। उक्त बिल के परीक्षण के पश्चात, उत्तरदाता, जो उक्त उप-कोषागार कार्यालय में प्रथम श्रेणी सहायक के रूप में कार्यरत था, ने शिकायतकर्ता (पी.डब्ल्यू.1) को निर्देश दिया कि वह बिल वापस ले जाए क्योंकि उसे पारित नहीं किया जा सकता। जब शिकायतकर्ता ने बिल पारित करने का अनुरोध किया, तब उत्तरदाता ने प्रत्येक के लिए ₹500/- (कुल ₹2,000/-) की अवैध प्रतिफल की मांग की। पूछताछ करने पर उसे ज्ञात हुआ कि उत्तरदाता की आदत थी कि वह रिश्वत राशि प्राप्त करने के पश्चात ही बिलों को पारित करता है। चूँकि शिकायतकर्ता मांगी गई राशि का भुगतान करने के लिए इच्छुक नहीं था, वह दिनांक 30.07.2009 को कर्नाटक के गुलबर्गा स्थित लोकायुक्त कार्यालय गया, जहाँ उसे उप-कोषागार कार्यालय में उत्तरदाता के साथ होने वाली बातचीत को रिकॉर्ड करने हेतु एक टेप रिकॉर्डर प्रदान किया गया। तदनुसार, शिकायतकर्ता उप-कोषागार कार्यालय गया और उत्तरदाता से पूछताछ की, जिस पर उत्तरदाता ने ₹2,000/- की रिश्वत राशि की मांग की तथा यह कहा कि उक्त राशि के भुगतान के पश्चात ही बिल पारित किया जाएगा और चेक जारी किया जाएगा। उक्त बातचीत टेप रिकॉर्डर में रिकॉर्ड की गई और दिनांक 05.08.2009 को शिकायतकर्ता द्वारा लोकायुक्त पुलिस को सौंप दी गई, साथ ही उत्तरदाता के विरुद्ध कार्रवाई करने का अनुरोध किया गया। शिकायत प्राप्त होने के पश्चात, लोकायुक्त पुलिस ने अधिनियम की धारा 13(1)(d) सहपठित धारा 13(2) के अंतर्गत अपराध संख्या 13 वर्ष 2009 दर्ज किया।

5. शिकायतकर्ता द्वारा दर्ज कराई गई शिकायत के आधार पर दिनांक 05.08.2009 को ट्रैप की कार्यवाही की गई, जिसमें ₹2,000/- की रिश्वत राशि उत्तरदाता के कब्जे से बरामद की गई। विस्तृत जांच के उपरांत, लोकायुक्त पुलिस ने आरोप-पत्र प्रस्तुत किया, जिसे विशेष वाद संख्या 586 वर्ष 2010 के रूप में अभिलेख पर लिया गया और तत्पश्चात उत्तरदाता के विरुद्ध अधिनियम की धारा 7 तथा धारा 13(1)(d) सहपठित धारा 13(2) के अंतर्गत दंडनीय अपराधों के लिए आरोप निर्धारित किए गए। उत्तरदाता ने दोष स्वीकार नहीं किया और विचारण की मांग की।

6. उत्तरदाता के विरुद्ध निर्धारित आरोपों को सिद्ध करने हेतु, अभियोजन ने पी.डब्ल्यू.1 से पी.डब्ल्यू.12 तक साक्षियों का परीक्षण किया तथा प्रदर्श P1 से P30 तक के दस्तावेजों को अंकित किया, इसके अतिरिक्त M.O.1 से M.O.10 तक के भौतिक वस्तुओं को भी अभिलेख पर लिया। तथापि, उत्तरदाता की ओर से कोई मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया।

7. दोनों पक्षों की सुनवाई करने तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परीक्षण करने के उपरांत, विचारण न्यायालय ने दिनांक 13.10.2015 के निर्णय द्वारा उत्तरदाता को अधिनियम की धारा 7 तथा धारा 13(1)(d) सहपठित धारा 13(2) के अंतर्गत अपराधों का दोषी पाया और उसे दोषसिद्ध करते हुए, धारा 7 के अंतर्गत छह माह के कारावास तथा ₹2,500/- के जुर्माने से दंडित किया, तथा जुर्माना न देने की स्थिति में अतिरिक्त दो माह के कारावास का आदेश दिया। इसी प्रकार, धारा 13(1)(d) सहपठित धारा 13(2) के अंतर्गत दो वर्ष के कारावास तथा ₹5,000/- के जुर्माने से दंडित किया गया, और जुर्माना न देने की स्थिति में अतिरिक्त छह माह के कारावास का आदेश दिया गया। दोनों दंडादेशों को साथ-साथ चलने का निर्देश दिया गया।

8. विचारण न्यायालय द्वारा पारित उक्त दोषसिद्धि एवं दंडादेश को चुनौती देते हुए, उत्तरदाता ने आपराधिक अपील संख्या 200105 वर्ष 2015 में अपील दायर की, जिसे स्वीकार कर लिया गया तथा दिनांक 16.02.2022 के निर्णय द्वारा उच्च न्यायालय ने उत्तरदाता को आरोपों से दोषमुक्त कर दिया। उक्त निर्णय से आहत एवं असंतुष्ट होकर, राज्य ने वर्तमान अपील दायर की है।

9. उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय एवं आदेश को चुनौती देते हुए, अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित प्रस्तुतियाँ कीं:

9.1 शिकायतकर्ता (पी.डब्ल्यू.1) के साक्ष्य के अनुसार, उत्तरदाता ने प्रारंभ में बिल पारित करने से इंकार किया और शिकायतकर्ता से उसे वापस ले जाने को कहा; तथापि, शिकायतकर्ता के अनुरोध पर, उत्तरदाता ने अपने उच्च अधिकारियों को प्रभावित कर बिल पारित कराने के लिए सहमति दी और इसके लिए अवैध प्रतिफल की मांग की।

9.2 उत्तरदाता के अनुसार, उसने शिकायतकर्ता एवं अन्य के संबंध में बिल दिनांक 29.07.2009 को पारित कर दिया था तथा कोषागार कार्यालय द्वारा दिनांक 30.07.2009 को चेक तैयार कर

दिया गया था, अतः ट्रैप की तिथि, अर्थात् 05.08.2009 को उसके पास कोई कार्य लंबित नहीं था। तथापि, उक्त चेक न तो शिकायतकर्ता को जारी किया गया और न ही इस संबंध में विद्यालय प्राधिकारियों को कोई सूचना दी गई।

9.3 अभियोजन का मामला यह था कि उत्तरदाता ने शिकायतकर्ता एवं अन्य को देय बिल को अपने उच्च अधिकारियों को प्रभावित कर पारित कराने के लिए आधिकारिक अनुग्रह दर्शाने के बदले ₹2,000/- की अवैध प्रतिफल की मांग की। भले ही उत्तरदाता के पास कोई कार्य लंबित न हो, यदि वह किसी प्रतिफल की मांग करता है और उसे स्वीकार करता है, तो अधिनियम की धारा 7 के अंतर्गत अपराध के आवश्यक अवयव आकर्षित हो जाते हैं।

9.4. बेंगलुरु के कोषागार निदेशक (पी.डब्ल्यू.11), जो संबंधित समय पर सक्षम प्राधिकारी एवं अनुशासनात्मक प्राधिकारी थे, से आवश्यक स्वीकृति (Ex. P25) प्राप्त करने के पश्चात, उत्तरदाता के विरुद्ध आरोपों के लिए अभियोजन प्रारंभ किया गया; अतः उत्तरदाता के विरुद्ध अभियोजन आरंभ करने में कोई त्रुटि या अवैधता नहीं थी।

9.5. पी.डब्ल्यू.1 से पी.डब्ल्यू.3, पी.डब्ल्यू.4 एवं पी.डब्ल्यू.5 के साथ-साथ अन्वेषण अधिकारियों (पी.डब्ल्यू.10 एवं पी.डब्ल्यू.12) ने जब्ती पंचनामा (Ex. P11) के संबंध में सुसंगत रूप से साक्ष्य दिया तथा उनका साक्ष्य रिश्वत राशि की मांग एवं स्वीकृति तथा उत्तरदाता से उसकी बरामदगी के संबंध में अभियोजन के मामले का पूर्णतः समर्थन करता है। अतः अधिनियम की धारा 20(1) के अंतर्गत उपधारणा अभियोजन के पक्ष में स्थापित की जानी चाहिए।

9.6. इस न्यायालय के निर्णय **कृष्णा राम बनाम राज्य राजस्थान**5 पर भरोसा करते हुए यह प्रस्तुत किया गया कि जब यह सिद्ध हो जाता है कि धनराशि उत्तरदाता के कब्जे से बरामद हुई है, तब अधिनियम की धारा 20(1) के अंतर्गत उपधारणा को खंडित करने का दायित्व उत्तरदाता पर स्थानांतरित हो जाता है, किन्तु वह अभियोजन साक्षियों के जिरह के दौरान ऐसा करने में असफल रहा।

---

5. [2009] 4 एससीआर 457 : 2009 (2) क्राइम्स 337

9.7. यद्यपि उत्तरदाता ने यह प्रतिरक्षा ली कि उसके और शिकायतकर्ता (पी.डब्ल्यू.1) के बीच ऋण संबंधी लेन-देन थे और ट्रैप की तिथि से 8 से 10 दिन पूर्व पी.डब्ल्यू.1 ने उससे ₹2,000/- उधार लिए थे तथा जब उत्तरदाता ने उक्त राशि लौटाने के लिए दबाव डाला, तब उसके विरुद्ध यह मामला मिथ्या रूप से दर्ज कराया गया, तथापि इसके समर्थन में कोई विश्वसनीय एवं ठोस साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया।

9.8. इस प्रकार, अभियोजन ने संदेह से परे यह सिद्ध किया कि उत्तरदाता, जो अफजलपुर स्थित उप-कोषागार कार्यालय में प्रथम श्रेणी सहायक के रूप में कार्यरत एक सरकारी सेवक था, ने पी.डब्ल्यू.1 से अपने उच्च अधिकारियों को प्रभावित कर बिल पारित कराने के लिए ₹2,000/- की अवैध प्रतिफल की मांग की तथा दिनांक 05.08.2009 को ₹2,000/- की रिश्वत स्वीकार करते समय लोकायुक्त पुलिस द्वारा रंगे हाथों पकड़ा गया, और इस प्रकार उसने अधिनियम की धारा 7 तथा धारा 13(1)(d) सहपठित धारा 13(2) के अंतर्गत दंडनीय अपराध किए।

9.9. इन सभी पहलुओं को दृष्टिगत रखते हुए, विचारण न्यायालय ने उपर्युक्त अपराधों के लिए उत्तरदाता को दोषसिद्ध कर दंडित करना उचित किया। तथापि, उच्च न्यायालय द्वारा उत्तरदाता के पक्ष में दोषमुक्ति का निर्णय पारित करना त्रुटिपूर्ण है, जिसे इस अपील में निरस्त किया जाना अपेक्षित है।

10. इसके विपरीत, उत्तरदाता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने यह प्रस्तुत किया कि उत्तरदाता ने बिल दिनांक 29.07.2009 को पारित कर दिया था तथा दिनांक 30.07.2009 को चेक तैयार हो गया था और 05.08.2009 की तिथि पर उसके पास कोई कार्य लंबित नहीं था, अतः उसने अभियोजन द्वारा आरोपित के अनुसार शिकायतकर्ता से कोई रिश्वत राशि की मांग नहीं की। उक्त तथ्य को ध्यान में रखते हुए तथा पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्यों का विश्लेषण करने के पश्चात, उच्च न्यायालय ने उत्तरदाता द्वारा दायर अपील को उचित रूप से स्वीकार किया और विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि के निर्णय को निरस्त कर दिया; अतः इसमें इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप किए जाने की आवश्यकता नहीं है।

11. हमने पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत तर्कों पर विचार किया है तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का सावधानीपूर्वक एवं सूक्ष्मता से परीक्षण किया है।

12. वर्तमान मामले में, उत्तरदाता पर अधिनियम की धारा 7 तथा धारा 13(1)(d) सहपठित धारा 13(2) के अंतर्गत आरोप लगाए गए थे, कि उसने शिकायतकर्ता (पी.डब्ल्यू.1) से उसके तथा उसके विद्यालय के तीन अशैक्षणिक कर्मचारियों के ₹43,323/- के अर्जित अवकाश समर्पण के भुनाने के बिल को पारित करने के लिए ₹2,000/- की रिश्वत राशि की मांग की और उसे स्वीकार किया। यद्यपि विचारण न्यायालय ने उसे उपर्युक्त अपराधों का दोषी ठहराते हुए दंडित किया, तथापि उच्च न्यायालय ने उक्त निष्कर्षों को पलट दिया और उत्तरदाता को आरोपों से दोषमुक्त कर दिया। अतः यह अपील उत्तरदाता के दोषमुक्ति के निर्णय के विरुद्ध है।

13. अधिनियम की धारा 7 लोक सेवकों द्वारा उनके विधिक पारिश्रमिक के अतिरिक्त अवैध प्रतिफल को स्वीकार करने या स्वीकार करने का प्रयास करने से संबंधित है। इसके आवश्यक अवयव हैं: (i) प्रतिफल स्वीकार करने वाला व्यक्ति लोक सेवक होना चाहिए; तथा (ii) वह प्रतिफल स्वयं के लिए स्वीकार किया गया हो और वह किसी आधिकारिक कार्य को करने या न करने के लिए, अथवा अपने आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में किसी व्यक्ति के प्रति अनुग्रह या प्रतिकूलता दर्शाने या न दर्शाने के लिए प्रेरणा या पुरस्कार के रूप में हो6। जहाँ तक अधिनियम की धारा 13(1)(d) का संबंध है, इसमें भ्रष्टाचार निवारण (संशोधन) अधिनियम, 2018 द्वारा दिनांक 26 जुलाई 2018 से संशोधन किया गया। तथापि, सामान्य उपबंध अधिनियम की धारा 6 के आलोक में, संशोधन से पूर्व की धारा 13(1)(d) वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू होगी, क्योंकि कथित अपराध दिनांक 05.08.2009 को किया गया था। अतः इसके आवश्यक अवयव हैं: (i) अभियुक्त लोक सेवक होना चाहिए; (ii) उसने भ्रष्ट या अवैध साधनों का उपयोग किया हो अथवा अपने पद का दुरुपयोग किया हो; तथा (iii) उसने स्वयं या किसी अन्य व्यक्ति के लिए कोई मूल्यवान वस्तु या आर्थिक लाभ प्राप्त किया हो।

14. विधि सुस्थापित है। **सी.एम. गिरिश बाबू बनाम सीबीआई**7 तथा **बी. जयराज बनाम राज्य आंध्र प्रदेश**8 में, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धाराएँ 7, 13(1)(d)(i) एवं (ii) के संदर्भ में यह पुनः प्रतिपादित किया गया है कि यह संदेह से परे सिद्ध किया जाना आवश्यक है कि अभियुक्त ने स्वेच्छा से धनराशि को यह जानते हुए स्वीकार किया कि वह रिश्वत है; अवैध प्रतिफल की मांग के प्रमाण के अभाव में मात्र मुद्रा नोटों का कब्जा या बरामदगी इस प्रकार के अपराध के गठन के लिए पर्याप्त नहीं है; तथा अधिनियम की धारा 20 के अंतर्गत उपधारणा तभी लागू की जा सकती है जब अवैध प्रतिफल की मांग और उसकी स्वीकृति सिद्ध हो जाए।

15. उल्लेखनीय है कि संविधान पीठ ने **नीरज दत्ता बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार)**9 में इस प्रश्न का सकारात्मक उत्तर दिया है कि 'क्या शिकायतकर्ता के साक्ष्य/अवैध प्रतिफल की मांग के प्रत्यक्ष या प्राथमिक साक्ष्य के अभाव में, अभियोजन द्वारा प्रस्तुत अन्य साक्ष्यों के आधार पर लोक सेवक की दोषसिद्धि/अपराधिता का अनुमान धाराएँ 7 एवं 13(1)(d) सहपठित धारा 13(2) के अंतर्गत लगाया जा सकता है', और निम्नलिखित निष्कर्ष प्रतिपादित किए:

"88. उपर्युक्त चर्चा से जो निष्कर्ष निकलता है, उसे निम्न प्रकार से संक्षेपित किया जा सकता है:

88.1.(a) अधिनियम की धाराएँ 7 तथा 13(1)(d)(i) एवं (ii) के अंतर्गत लोक सेवक अभियुक्त के अपराध को स्थापित करने हेतु अभियोजन द्वारा अवैध प्रतिफल की मांग एवं उसकी स्वीकृति का तथ्य सिद्ध किया जाना अनिवार्य शर्त (sine qua non) है।

88.2.(b) अभियुक्त के दोष को सिद्ध करने के लिए, अभियोजन को पहले अवैध प्रतिफल की मांग तथा उसके पश्चात उसकी स्वीकृति को तथ्य के रूप में सिद्ध करना होगा। यह तथ्य प्रत्यक्ष साक्ष्य द्वारा सिद्ध किया जा सकता है, जो मौखिक अथवा दस्तावेजी साक्ष्य के रूप में हो सकता है।

88.3.(c) इसके अतिरिक्त, उक्त तथ्य–अर्थात् अवैध प्रतिफल की मांग एवं स्वीकृति का प्रमाण–प्रत्यक्ष मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य के अभाव में परिस्थितिजन्य साक्ष्य द्वारा भी सिद्ध किया जा सकता है।

88.4.(d) उक्त तथ्य, अर्थात् लोक सेवक द्वारा अवैध प्रतिफल की मांग एवं स्वीकृति को सिद्ध करने के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए:

---

6. ए. सुबैर बनाम केरल राज्य (2009) 6 एससीसी 587
7. [2009] 2 एससीआर 1021 : (2009) 3 एससीसी 779 : (2009) 2 एससीसी (क्रि) 1
8. [2014] 4 एससीआर 554 : (2014) 13 एससीसी 55 : (2014) 5 एससीसी (क्रि) 543
9. [2023] 2 एससीआर 997 : (2023) 4 एससीसी 731 : 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 1724

(i) यदि रिश्वत देने वाला बिना किसी मांग के प्रस्ताव देता है और लोक सेवक मात्र उस प्रस्ताव को स्वीकार कर अवैध प्रतिफल प्राप्त कर लेता है, तो यह अधिनियम की धारा 7 के अंतर्गत स्वीकृति का मामला होगा। ऐसे मामले में लोक सेवक द्वारा पूर्व मांग का होना आवश्यक नहीं है।

(ii) दूसरी ओर, यदि लोक सेवक मांग करता है और रिश्वत देने वाला उस मांग को स्वीकार करते हुए मांगी गई राशि प्रदान करता है, जिसे लोक सेवक प्राप्त करता है, तो यह 'प्राप्ति' (obtainment) का मामला होगा। इस स्थिति में अवैध प्रतिफल की पूर्व मांग लोक सेवक से उत्पन्न होती है। यह अधिनियम की धारा 13(1)(d)(i) एवं (ii) के अंतर्गत अपराध है।

(iii) उपर्युक्त (i) एवं (ii) दोनों स्थितियों में, क्रमशः रिश्वत देने वाले द्वारा प्रस्ताव तथा लोक सेवक द्वारा की गई मांग को अभियोजन द्वारा विचारणीय तथ्य के रूप में सिद्ध किया जाना आवश्यक है। अन्य शब्दों में, मात्र अवैध प्रतिफल की स्वीकृति या प्राप्ति, बिना किसी अन्य तत्व के, अधिनियम की धारा 7 या धारा 13(1)(d)(i) एवं (ii) के अंतर्गत अपराध सिद्ध करने के लिए पर्याप्त नहीं है। अतः धारा 7 के अंतर्गत अपराध सिद्ध करने के लिए आवश्यक है कि रिश्वत देने वाले की ओर से प्रस्ताव हो, जिसे लोक सेवक स्वीकार करे। इसी प्रकार, जब लोक सेवक द्वारा पूर्व मांग की जाती है और रिश्वत देने वाला उसे स्वीकार कर भुगतान करता है, जिसे लोक सेवक प्राप्त करता है, तो यह धारा 13(1)(d)(i) एवं (ii) के अंतर्गत 'प्राप्ति' का अपराध होगा।

88.5.(e) अवैध प्रतिफल की मांग एवं स्वीकृति/प्राप्ति के संबंध में तथ्यात्मक उपधारणा न्यायालय द्वारा केवल तभी अनुमान के रूप में स्थापित की जा सकती है, जब आधारभूत तथ्य प्रासंगिक मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा सिद्ध कर दिए गए हों, न कि उनके अभाव में। अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर, न्यायालय के पास यह विवेकाधिकार है कि वह यह विचार करते हुए तथ्यात्मक उपधारणा स्थापित करे कि क्या अभियोजन द्वारा मांग का तथ्य सिद्ध किया गया है या नहीं। निस्संदेह, ऐसी उपधारणा अभियुक्त द्वारा खंडित किए जाने के अधीन है और यदि खंडन नहीं किया जाता है, तो उपधारणा कायम रहती है।

88.6.(f) यदि शिकायतकर्ता शत्रुतापूर्ण (hostile) हो जाए, या उसका निधन हो जाए अथवा वह विचारण के दौरान साक्ष्य देने हेतु उपलब्ध न हो, तब भी अवैध प्रतिफल की मांग अन्य साक्षियों

के माध्यम से, चाहे मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा, अथवा परिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर सिद्ध की जा सकती है। विचारण समाप्त नहीं होता और न ही इससे लोक सेवक अभियुक्त की दोषमुक्ति स्वतः हो जाती है।

88.7.(g) जहाँ तक अधिनियम की धारा 7 का संबंध है, विचारणीय तथ्यों के सिद्ध हो जाने पर धारा 20 न्यायालय को यह उपधारणा करने के लिए बाध्य करती है कि अवैध प्रतिफल उक्त धारा में वर्णित उद्देश्य, अर्थात् प्रेरणा या पुरस्कार के रूप में था। उक्त उपधारणा न्यायालय द्वारा विधिक उपधारणा के रूप में की जानी चाहिए। निस्संदेह, यह उपधारणा भी खंडन के अधीन है। धारा 20, अधिनियम की धारा 13(1)(d)(i) एवं (ii) पर लागू नहीं होती।

88.8.(h) हम यह स्पष्ट करते हैं कि अधिनियम की धारा 20 के अंतर्गत विधिक उपधारणा, उपर्युक्त बिंदु (e) में उल्लिखित तथ्यात्मक उपधारणा से भिन्न है, क्योंकि पहली अनिवार्य (mandatory) है, जबकि दूसरी विवेकाधीन (discretionary) प्रकृति की है।"

16. यह निर्विवाद है कि वर्तमान उत्तरदाता एक सरकारी सेवक है। अधिनियम की धारा 19 के अनुसार, केंद्र या राज्य सरकार के किसी लोक सेवक के विरुद्ध धाराएँ 7, 10, 11, 13 एवं 15 के अंतर्गत दंडनीय अपराधों के लिए न्यायालय द्वारा संज्ञान लेने से पूर्व आवश्यक स्वीकृति प्राप्त करना अनिवार्य है। वर्तमान मामले में, अभियोजन ने पी.डब्ल्यू.11, जो अनुशासनात्मक प्राधिकारी एवं सक्षम प्राधिकारी थे, से आवश्यक स्वीकृति (Ex. P25) प्राप्त की। स्वीकृति आदेश (Ex. P25) से स्पष्ट है कि बेंगलुरु के कोषागार निदेशक (पी.डब्ल्यू.11) ने लोकायुक्त पुलिस द्वारा प्रेषित दस्तावेजों, जैसे कि शिकायत, प्राथमिकी, अभिरोपण पंचनामा, जब्ती पंचनामा, एफ.एस.एल. की रिपोर्ट, घटनास्थल का नक्शा तथा मामले से संबंधित अन्य प्रासंगिक दस्तावेज, जिनमें साक्षियों के कथन एवं उत्तरदाता का कथन भी सम्मिलित है, का परीक्षण करने के पश्चात, उत्तरदाता के विरुद्ध अभियोजन प्रारंभ करने हेतु स्वीकृति प्रदान की। अतः स्वीकृति प्रदान करने में हमें कोई प्रक्रियात्मक अनियमितता नहीं प्रतीत होती। स्वीकृति प्रदान करने वाले प्राधिकारी (पी.डब्ल्यू.11) ने यह भी अपने साक्ष्य में कहा कि उन्होंने लोकायुक्त पुलिस द्वारा उपलब्ध कराए गए समस्त दस्तावेजों का अवलोकन कर, यह संतुष्टि प्राप्त की कि उत्तरदाता के विरुद्ध अभियोजन प्रारंभ करने हेतु प्रथमदृष्टया मामला बनता है, और ऐसी संतुष्टि प्राप्त करने के उपरांत उन्होंने स्वीकृति (Ex. P25) प्रदान की। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि अभियोजन ने

सक्षम प्राधिकारी से स्वीकृति आदेश प्राप्त करने के पश्चात ही उत्तरदाता के विरुद्ध कार्यवाही प्रारंभ की।

17. उपर्युक्त विधिक सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, अब हम उत्तरदाता के विरुद्ध आरोपों को सिद्ध करने के लिए अभियोजन साक्षियों के कथनों का परीक्षण करते हैं। पी.डब्ल्यू.1 शिकायतकर्ता है, जिसने उत्तरदाता के विरुद्ध शिकायत (Ex. P1) दर्ज कराई, जिसके आधार पर अभियोजन प्रारंभ हुआ। उसने अपने साक्ष्य में यह कहा कि ब्लॉक शिक्षा अधिकारी के निर्देश प्राप्त करने के पश्चात, उसने अपने तथा अपने विद्यालय के तीन अशैक्षणिक कर्मचारियों के समर्पित अवकाश वेतन के भुनाने हेतु ₹43,323/- का बिल दिनांक 29.07.2009 को उप-कोषागार कार्यालय, अफजलपुर में प्रस्तुत किया और उसे पारित करने के लिए उत्तरदाता से अनुरोध किया। उक्त बिल का परीक्षण करने के पश्चात, उत्तरदाता ने शिकायतकर्ता को निर्देश दिया कि वह बिल वापस ले जाए, क्योंकि इसे स्वीकृत नहीं किया जा सकता। तथापि, शिकायतकर्ता के अनुरोध करने पर, उत्तरदाता ने अपने उच्च अधिकारियों को प्रभावित कर बिल पारित कराने के लिए ₹2,000/- की रिश्वत की मांग की। चूँकि शिकायतकर्ता ने उत्तरदाता की मांग को स्वीकार नहीं किया, वह दिनांक 30.07.2009 को लोकायुक्त कार्यालय गया और इस संबंध में सूचना दी। लोकायुक्त अधिकारियों ने उसे उत्तरदाता के साथ होने वाली बातचीत को रिकॉर्ड करने हेतु एक टेप रिकॉर्डर प्रदान किया। दिनांक 31.07.2009 को शिकायतकर्ता उप-कोषागार कार्यालय गया और उत्तरदाता से बिल पारित करने के संबंध में पूछताछ की, जिस पर उत्तरदाता ने ₹2,000/- की अवैध प्रतिफल की मांग की। उक्त बातचीत टेप रिकॉर्डर में रिकॉर्ड की गई और दिनांक 05.08.2009 को शिकायत (Ex. P1) के साथ लोकायुक्त पुलिस को सौंप दी गई। Ex. P1(a) उसका हस्ताक्षर है।

17.1. शिकायतकर्ता ने अपने साक्ष्य में आगे कहा कि दिनांक 05.08.2009 को लोकायुक्त निरीक्षक ने पी.डब्ल्यू.2 एवं पी.डब्ल्यू.3 को पंचनामा साक्षियों के रूप में बुलाया तथा शिकायतकर्ता का उनसे परिचय कराया, जिसने उत्तरदाता द्वारा की गई अवैध प्रतिफल की मांग के बारे में उन्हें अवगत कराया। इसके पश्चात, टेप रिकॉर्डर में रिकॉर्ड की गई बातचीत उन्हें सुनाई गई, जिसे लिखित रूप में (Ex. P21) अभिलिखित किया गया। तत्पश्चात, शिकायतकर्ता ने ₹500/- के मूल्यवर्ग के चार मुद्रा नोट प्रस्तुत किए। लोकायुक्त पुलिस ने उन नोटों पर फिनोल्फ्थलीन पाउडर लगाया और उन्हें इशप्पा (पी.डब्ल्यू.3) को सौंपा, जिसने नोटों को गिनकर

शिकायतकर्ता की पैंट की बाईं जेब में रख दिया। इसके बाद, पी.डब्ल्यू.3 के दोनों हाथों को सोडियम कार्बोनेट के घोल में डुबोया गया, जो गुलाबी रंग में परिवर्तित हो गया, और उस घोल को एक बोतल (M.O.1) में सुरक्षित किया गया। तत्पश्चात, अभिरोपण पंचनामा (Ex. P2) तैयार किया गया तथा Exs. P3 से P10 तक के फोटोग्राफ भी लिए गए।

17.2. पी.डब्ल्यू.1 के साक्ष्य से यह भी स्पष्ट होता है कि शिकायतकर्ता, पी.डब्ल्यू.2 एवं पी.डब्ल्यू.3 के साथ तथा लोकायुक्त निरीक्षक एवं उसके स्टाफ के साथ जीप से उप-कोषागार कार्यालय की ओर गए और बस स्टैंड पर जीप खड़ी की। इसके बाद, शिकायतकर्ता एवं छाया साक्षी (पी.डब्ल्यू.2) उत्तरदाता के कार्यालय में गए। शिकायतकर्ता ने उत्तरदाता से मिलकर बिल पारित करने के संबंध में पूछा। उस समय उत्तरदाता ने रिश्वत राशि की मांग की और शिकायतकर्ता को एक होटल में ले गया, जहाँ शिकायतकर्ता ने उसे राशि सौंप दी। मुद्रा नोटों को गिनने के पश्चात, उत्तरदाता ने उन्हें अपनी पैंट की बाईं जेब में रख लिया। संकेत दिए जाने पर, लोकायुक्त पुलिस कोषागार कार्यालय पहुँची, उत्तरदाता को पकड़ लिया और विधिवत प्रक्रिया का पालन करते हुए उसके पैंट की बाईं जेब से दागी मुद्रा नोटों को जब्त किया तथा जब्ती पंचनामा (Ex. P11) तैयार किया, साथ ही M.O.2 से M.O.7 तक के भौतिक साक्ष्य भी एकत्र किए। इस जब्ती के दौरान लिए गए फोटोग्राफ Exs. P12 से P17 के रूप में अंकित किए गए।

17.3. पी.डब्ल्यू.1 के साक्ष्य का समर्थन पी.डब्ल्यू.2 एवं पी.डब्ल्यू.3 पंच साक्षियों द्वारा किया गया। छाया साक्षी बसवराज (पी.डब्ल्यू.2), जो ट्रैप के समय शिकायतकर्ता के साथ थे, ने अपने साक्ष्य में स्पष्ट रूप से जब्ती पंचनामा (Ex. P11) के तैयार किए जाने, विशेष रूप से उत्तरदाता के कब्जे से दागी मुद्रा नोटों की बरामदगी तथा ट्रैप के समय उत्तरदाता द्वारा पहनी गई पैंट के संबंध में बयान दिया। ट्रैप साक्षी इशप्पा (पी.डब्ल्यू.3) ने भी अपने साक्ष्य में यही तथ्य बताए। इस प्रकार, पी.डब्ल्यू.1 से पी.डब्ल्यू.3 के साक्ष्य स्पष्ट रूप से यह दर्शाते हैं कि ट्रैप सफलतापूर्वक संपन्न हुआ तथा उत्तरदाता द्वारा शिकायतकर्ता एवं अन्य के बिल पारित करने के लिए अवैध प्रतिफल की मांग एवं स्वीकृति की गई।

17.4. पी.डब्ल्यू.4 एवं पी.डब्ल्यू.5, अफजलपुर के उप-कोषागार कार्यालय में कार्यरत अधिकारी हैं, जिन्होंने अन्वेषण अधिकारी के निर्देशानुसार इस मामले से संबंधित अभिलेख प्रस्तुत किए।

पी.डब्ल्यू.4–बसवराज–ने अपने साक्ष्य में कहा कि कथित ट्रैप की तिथि पर वह तथा उत्तरदाता, दोनों, उप-कोषागार कार्यालय, अफजलपुर में कार्यरत थे। उसके माध्यम से कार्य-वितरण आदेश की प्रति (Ex. P29) अभिलेख पर रखी गई, जिससे यह स्पष्ट होता है कि उत्तरदाता प्रथम श्रेणी सहायक के रूप में कार्यरत था और समर्पित अवकाश वेतन के भुनाने के बिलों को पारित करने से संबंधित अनुभाग का दायित्व संभाल रहा था, जिन्हें अनुमोदन हेतु उसके उच्च अधिकारियों को प्रस्तुत किया जाना था। पी.डब्ल्यू.4 के साक्ष्य, Ex. P29 के साथ, यह स्पष्ट करते हैं कि शिकायतकर्ता द्वारा प्रस्तुत समर्पित अवकाश वेतन के बिल को प्राप्त करने एवं उसकी जांच करने का कार्य उत्तरदाता को सौंपा गया था। इसके अतिरिक्त, पी.डब्ल्यू.4 ने अपने मुख्य परीक्षण में स्पष्ट रूप से कहा कि धनराशि उत्तरदाता से बरामद हुई थी, और जिरह में यह कहा कि विद्यालय में तैयार किए गए बिल कर्मचारी के माध्यम से कोषागार में प्रस्तुत किए जाते थे तथा उसे यह जानकारी नहीं थी कि दिनांक 05.08.2009 को शिकायतकर्ता से संबंधित कोई कार्य उत्तरदाता के पास लंबित नहीं था। उपस्थिति रजिस्टर, टोकन रसीद, चेक तथा बिल पासिंग रजिस्टर की प्रमाणित प्रतियाँ उसके माध्यम से Exs. P18 से P20 एवं P23 के रूप में अंकित की गईं।

17.5. पी.डब्ल्यू.5–शंकरप्पा, जो एस.टी.ओ., अफजलपुर के मुख्य लेखा अधिकारी हैं, ने अपने साक्ष्य में कहा कि दिनांक 05.08.2009 को लगभग 02:15 बजे दो व्यक्ति आए और उत्तरदाता को उनके कार्यालय से बाहर ले गए; इसके पश्चात लगभग 6 से 7 व्यक्ति उत्तरदाता के साथ आए और उसे उसकी सीट पर बैठाया; दो व्यक्तियों ने उसके हाथ पकड़ रखे थे, जिनमें से एक ने स्वयं को लोकायुक्त का पुलिस निरीक्षक बताया और सूचित किया कि उन्होंने उत्तरदाता को शिकायतकर्ता से ₹2,000/- की रिश्वत राशि लेते समय पकड़ा है। उत्तरदाता के दोनों हाथों को सोडियम कार्बोनेट के घोल में डुबोया गया, जो हल्के गुलाबी रंग में परिवर्तित हो गया; उत्तरदाता ने अपनी पैंट की जेब से राशि पुलिस को सौंप दी; उसकी पैंट को भी सोडियम कार्बोनेट के घोल में डुबोया गया, जो हल्के गुलाबी रंग में परिवर्तित हो गया; और उक्त घोल को अलग-अलग बोतलों में एकत्र कर सील किया गया। इस प्रकार, पी.डब्ल्यू.4 एवं पी.डब्ल्यू.5 ने लोकायुक्त पुलिस द्वारा लगाए गए ट्रैप तथा उत्तरदाता के कब्जे से दागी मुद्रा नोटों की जब्ती के संबंध में सुसंगत रूप से साक्ष्य दिया।

17.6. पी.डब्ल्यू.6–दत्तात्रेय, जो होटल के स्वामी हैं, ने साक्ष्य दिया कि दिनांक 05.08.2009 को उत्तरदाता उनके होटल में आया और चाय पी।

17.7. पी.डब्ल्यू.7–महंतप्पा, जो चिनामगेरा ग्राम स्थित महंतेश्वर हाई स्कूल में चौकीदार के रूप में कार्यरत हैं, ने कहा कि शिकायतकर्ता ने ब्लॉक शिक्षा अधिकारी के माध्यम से अपने तथा अन्य के समर्पित अवकाश वेतन का बिल तैयार किया, जिसे भुनाने हेतु एस.टी.ओ., अफजलपुर में प्रस्तुत किया गया। उन्होंने आगे कहा कि शिकायतकर्ता ने उन्हें बताया कि कोषागार कार्यालय से बिल पारित कराने के लिए प्रत्येक से ₹500/- का भुगतान करना होगा, जिसके परिणामस्वरूप सभी ने मिलकर उक्त राशि का योगदान किया और शिकायतकर्ता को सौंप दिया, ताकि वह उत्तरदाता को रिश्वत राशि का भुगतान कर सके। इस प्रकार, पी.डब्ल्यू.7 ने परिस्थितिजन्य साक्षी के रूप में स्पष्ट रूप से उत्तरदाता द्वारा रिश्वत की मांग, प्रत्येक से ₹500/- का योगदान तथा उसे शिकायतकर्ता को सौंपे जाने के संबंध में साक्ष्य दिया।

17.8. पी.डब्ल्यू.8–सुब्बाराय, जो महंतपुर स्थित महंतेश्वर हाई स्कूल के प्रधानाध्यापक हैं, ने साक्ष्य दिया कि शिकायतकर्ता उक्त विद्यालय में कार्यरत था। वर्ष 2009-2010 में उन्होंने शिकायतकर्ता एवं अन्य कर्मचारियों के समर्पित अवकाश वेतन के भुनाने हेतु बिल तैयार किया और उसे शिकायतकर्ता के माध्यम से ब्लॉक शिक्षा अधिकारी के हस्ताक्षर हेतु प्रस्तुत किया। तत्पश्चात उन्हें यह जानकारी हुई कि उप-कोषागार कार्यालय के अधिकारी ने ₹2,000/- की रिश्वत राशि की मांग की थी तथा बाद में लोकायुक्त पुलिस द्वारा उत्तरदाता को ट्रैप किए जाने के बारे में भी ज्ञात हुआ।

17.9. पी.डब्ल्यू.9–राजशेखर, जो सहायक अभियंता हैं, ने अपने साक्ष्य में कहा कि दिनांक 11.08.2009 को लोकायुक्त पुलिस ने उनसे घटनास्थल का नक्शा तैयार करने का अनुरोध किया; तदनुसार, दिनांक 02.09.2009 को वह घटनास्थल पर गए, जिसे बसवराज द्वारा दिखाया गया, और उन्होंने घटनास्थल का नक्शा (Ex. P24) तैयार किया, जिस पर Ex. P24(a) उनका हस्ताक्षर है।

17.10. पी.डब्ल्यू.10–बसवराज, जो डी.सी.आई.बी. इकाई के एएसआई हैं, ने शिकायतकर्ता द्वारा शिकायत दर्ज कराने तथा प्राथमिकी के पंजीकरण के संबंध में साक्ष्य दिया। उन्होंने आगे

उत्तरदाता के विरुद्ध ट्रैप की कार्यवाही तथा अभिरोपण पंचनामा (Ex. P2) तैयार किए जाने के संबंध में भी बयान दिया।

17.11. पी.डब्ल्यू.12–महेश्वरगौड़ा, अन्वेषण अधिकारी हैं, जिन्होंने साक्ष्य दिया कि दिनांक 05.08.2009 को शिकायतकर्ता ने आकर शिकायत दर्ज कराई तथा उसके द्वारा रिकॉर्ड की गई टेप रिकॉर्डर की बातचीत भी प्रस्तुत की; उसी के आधार पर उत्तरदाता के विरुद्ध प्राथमिकी (Ex. P26) दर्ज की गई। उन्होंने दिनांक 05.08.2009 को संपन्न ट्रैप कार्यवाही, उसकी सफल परिणति, जब्ती पंचनामा तैयार किए जाने तथा भौतिक साक्ष्यों के संकलन के संबंध में विस्तार से वर्णन किया। इस प्रकार, पी.डब्ल्यू.10 एवं पी.डब्ल्यू.12 ने सुसंगत एवं स्पष्ट रूप से उत्तरदाता द्वारा रिश्वत राशि की मांग एवं स्वीकृति तथा उसके कब्जे से दागी मुद्रा नोटों की बरामदगी के संबंध में साक्ष्य दिया, जिसे उन्होंने जिरह में भी दोहराया, और यह साक्ष्य पी.डब्ल्यू.1 से पी.डब्ल्यू.3 के साक्ष्य के साथ पूर्णतः सामंजस्य रखता है।

18. उत्तरदाता की ओर से अपने पक्ष को सिद्ध करने हेतु कोई मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया। यद्यपि उत्तरदाता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विस्तृत जिरह की गई, तथापि अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य को अविश्वसनीय ठहराने हेतु कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ।

19. अतः उपर्युक्त सामग्री से यह पूर्णतः स्पष्ट है कि पी.डब्ल्यू.1 से पी.डब्ल्यू.3 के साक्ष्य, पी.डब्ल्यू.4 एवं पी.डब्ल्यू.5 के साक्ष्य के साथ-साथ अन्वेषण अधिकारियों (पी.डब्ल्यू.10 एवं पी.डब्ल्यू.12) के साक्ष्य द्वारा, जो अभियोजन के मामले का पूर्णतः समर्थन करते हैं, 'मांग' एवं 'स्वीकृति' की रिश्वत राशि तथा उसकी उत्तरदाता के कब्जे से बरामदगी सिद्ध होती है।

20. उत्तरदाता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता का मुख्य तर्क यह है कि बिल दिनांक 29.07.2009 को पारित कर दिया गया था और उसी दिन चेक तैयार करने हेतु पी.डब्ल्यू.4 को भेज दिया गया था तथा चेक (Ex. P19) भी दिनांक 30.07.2009 को तैयार हो गया था, अतः कथित ट्रैप की तिथि, अर्थात् 05.08.2009 को उत्तरदाता के पास कोई कार्य लंबित नहीं था और उसने शिकायतकर्ता से कोई रिश्वत न तो मांगी और न ही स्वीकार की। किन्तु उक्त चेक न तो शिकायतकर्ता को जारी किया गया और न ही इस संबंध में दिनांक 05.08.2009 तक विद्यालय प्राधिकारियों को कोई सूचना दी गई, और न ही शिकायतकर्ता को यह बताया गया कि चेक पहले से तैयार था। इसके अतिरिक्त, उत्तरदाता की ओर से यह स्पष्ट करने हेतु कोई युक्तिसंगत

कारण प्रस्तुत नहीं किया गया कि चेक संबंधित पक्ष को जारी किए बिना उप-कोषागार कार्यालय में क्यों रखा गया। यह सामान्य ज्ञान की बात है कि जब कोई बिल उप-कोषागार कार्यालय में स्वीकृति हेतु प्रस्तुत किया जाता है, तो संबंधित पक्ष को चेक जारी किए जाने के पश्चात ही कार्य पूर्ण माना जाता है। वर्तमान मामले में न तो चेक जारी किया गया और न ही ट्रैप की तिथि तक कार्य पूर्ण हुआ माना जा सकता है; अतः उत्तरदाता की ओर से प्रस्तुत उक्त तर्क स्वीकार्य नहीं है।

21. यह स्थापित विधि है कि जब दो मूलभूत तथ्य, अर्थात् 'मांग' और 'स्वीकृति' सिद्ध हो जाते हैं, तब अधिनियम की धारा 20 के अंतर्गत यह उपधारणा लागू की जा सकती है कि प्रतिफल धारा 7 के अंतर्गत वर्णित उद्देश्य, अर्थात् प्रेरणा या पुरस्कार के रूप में मांगा और स्वीकार किया गया था। तथापि, यह उपधारणा खंडनीय है और अभियुक्त संभावनाओं के प्राधान्य के आधार पर भी इसका खंडन कर सकता है। वर्तमान मामले में, अभियोजन ने संदेह से परे यह सिद्ध कर दिया है कि शिकायतकर्ता से रिश्वत राशि की 'मांग' और 'स्वीकृति' हुई तथा दागी मुद्रा नोट उत्तरदाता के कब्जे से बरामद हुए। उक्त कार्यवाही से पूर्व मांग को टेप रिकॉर्डर में रिकॉर्ड किया गया था। ऐसी परिस्थितियों में, उत्तरदाता पर यह दायित्व था कि वह अभियोजन के मामले का खंडन करते हुए यह स्थापित करे कि ₹2,000/- की प्राप्ति रिश्वत नहीं थी, बल्कि वैध शुल्क या ऋण की वापसी थी, चाहे वह अभियोजन साक्षियों के जिरह के माध्यम से हो या ठोस साक्ष्य प्रस्तुत करके।किन्तु, वह ऐसा करने में असफल रहा और इसके विपरीत हमें यह प्रतीत होता है कि अभियोजन ने अपना मामला संदेह से परे पूर्णतः सिद्ध कर दिया है।

22. यद्यपि उत्तरदाता ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अंतर्गत दर्ज अपने कथन में तथा लोकायुक्त पुलिस के समक्ष यह कहा कि उसके और शिकायतकर्ता के बीच ऋण संबंधी लेन-देन थे; घटना की तिथि से 8 से 10 दिन पूर्व शिकायतकर्ता ने उससे ₹2,000/- का हाथ-उधार लिया था; और जब उसने उक्त राशि की वापसी के लिए दबाव डाला, तब उसके विरुद्ध यह मिथ्या मामला दर्ज कराया गया, तथापि इस कथन के समर्थन में कोई भी मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया। यह निर्विवाद तथ्य है कि शिकायतकर्ता एक निजी अनुदानित विद्यालय में कार्यरत था तथा उत्तरदाता अफजलपुर के उप-कोषागार कार्यालय में प्रथम श्रेणी सहायक के रूप में कार्यरत था। इस संबंध में कोई भी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया जिससे यह सिद्ध हो कि दोनों के बीच ऐसा घनिष्ठ संबंध था कि हाथ-उधार दिया जा सके, अथवा उक्त

ऋण के दिए जाने का प्रमाण स्थापित हो सके। ऐसे ठोस साक्ष्य के अभाव में, उत्तरदाता द्वारा लिया गया यह प्रतिरक्षा अस्वीकार्य एवं अविश्वसनीय प्रतीत होता है। अतः यह सुरक्षित रूप से निष्कर्षित किया जा सकता है कि उत्तरदाता ने मुद्रा नोटों को स्वेच्छा से प्राप्त/स्वीकार किया था और पी.डब्ल्यू.1 से पी.डब्ल्यू.5 के साक्ष्य, साथ ही पी.डब्ल्यू.10 एवं पी.डब्ल्यू.12 के साक्ष्य से यह स्पष्ट होता है कि उत्तरदाता के कब्जे से रिश्वत राशि की मांग, स्वीकृति एवं बरामदगी सिद्ध हुई है तथा अभियोजन ने उत्तरदाता के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को संदेह से परे सिद्ध कर दिया है।

23. उपर्युक्त विश्लेषण के आलोक में, हम पाते हैं कि विचारण न्यायालय ने पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्यों के आधार पर उत्तरदाता को अधिनियम की धारा 7 तथा धारा 13(1)(d) सहपठित धारा 13(2) के अंतर्गत दंडनीय अपराधों का दोषी सही रूप से ठहराया तथा उसे दंडित किया। तथापि, उच्च न्यायालय ने इस न्यायालय के निर्णय **ए. सुबैर** (उपर्युक्त) पर भरोसा करते हुए यह माना कि ट्रैप की तिथि पर उत्तरदाता के पास कोई कार्य लंबित नहीं था, अतः अधिनियम की धाराएँ 7, 13(1)(d) सहपठित धारा 13(2) के अंतर्गत अपराध के आवश्यक अवयव पूर्ण नहीं होते। उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया यह दृष्टिकोण अस्थिर है, क्योंकि **ए. सुबैर** (उपर्युक्त) का निर्णय इस निष्कर्ष का समर्थन नहीं करता। वह एक ऐसा मामला था जिसमें शिकायतकर्ता का परीक्षण ही नहीं किया गया था तथा अन्य साक्षियों के साक्ष्य में भी विसंगतियाँ थीं। वर्तमान मामले में ऐसी कोई त्रुटि नहीं पाई जाती। जहाँ तक धारा 20 की उपधारा (3) में प्रतिफल की नगण्यता के संदर्भ का प्रश्न है, किए जाने या किए गए कृत्य तथा मांगी गई राशि को पृथक-पृथक नहीं देखा जा सकता। प्रतिफल का मूल्य उस कृत्य के अनुपात में देखा जाना चाहिए, जिसे किया जाना है या नहीं किया जाना है, अथवा अनुकूलता या प्रतिकूलता प्राप्त करने के लिए, ताकि यह न्यायालय को यह विश्वास दिला सके कि वह इतना नगण्य है कि भ्रष्ट आचरण की उपधारणा न की जाए। यह भी आवश्यक नहीं है कि केवल पर्याप्त या बड़ी राशि की मांग होने पर ही उपधारणा की जाए; समग्र परिस्थितियों एवं साक्ष्यों का भी अवलोकन आवश्यक है। धारा 20 तभी लागू होती है जब मांग और किए गए अथवा किए जाने वाले कृत्य के बीच कोई संबंध न हो। किन्तु जब भुगतान की प्राप्ति या प्रतिफल प्राप्त करने की सहमति का तथ्य सिद्ध हो जाता है, तब स्पष्ट रूप से संबंध या पुष्टिकरण स्थापित हो जाता है और ऐसी स्थिति में उपधारणा अप्रासंगिक हो जाती है। धारा 20

तब लागू होती है जब यह सिद्ध हो जाए कि लोक सेवक ने विधिक पारिश्रमिक के अतिरिक्त किसी प्रतिफल को स्वीकार किया है या उसे स्वीकार करने के लिए सहमति दी है, और उस स्थिति में यह उपधारणा होती है कि वह अधिनियम की धाराओं 7, 11 या 13(1)(b) के अंतर्गत वर्णित किसी कृत्य के लिए प्रेरणा या पुरस्कार के रूप में था। धारा 20 के अंतर्गत उपधारणा, परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 118 के समान है, जहाँ अभियुक्त पर यह दायित्व होता है कि वह यह सिद्ध करे कि वह आरोपित अपराधों का दोषी नहीं है। धारा 13 की उपधाराओं (1) एवं (2) के प्रथम दो अंग यह स्पष्ट करते हैं कि प्रतिफल की पर्याप्तता, उपधारणा उत्पन्न करने के लिए अप्रासंगिक है। इसके अतिरिक्त, उपधारा (3) केवल न्यायालय को यह विवेकाधिकार प्रदान करती है कि यदि राशि इतनी नगण्य हो कि मामले के तथ्यों में भ्रष्टाचार का निष्कर्ष निकालना उचित न हो, तो वह उपधारणा न करे। अतः यह कोई सामान्य नियम नहीं, बल्कि एक अपवाद है, जिसका प्रयोग न्यायालय परिस्थितियों के अनुसार कर सकता है। वर्तमान मामले के तथ्यों में, हम ऐसे विवेक के प्रयोग के लिए इच्छुक नहीं हैं। अतः उच्च न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्ति का निर्णय अवैध, त्रुटिपूर्ण एवं अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के प्रतिकूल है।

24. हम इस तथ्य से अवगत हैं कि दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में, यदि दो दृष्टिकोण संभव हों और अधीनस्थ न्यायालय ने अभियुक्त को दोषमुक्त किया हो, तो अपीलीय न्यायालय मात्र इस आधार पर दोषमुक्ति को निरस्त करने के लिए उचित नहीं होगा कि कोई अन्य दृष्टिकोण भी संभव है। वर्तमान मामले में, उत्तरदाता के कब्जे से रिश्वत राशि की बरामदगी सिद्ध हो चुकी है तथा ठोस साक्ष्य के अभाव में उत्तरदाता द्वारा दिया गया स्पष्टीकरण पूर्णतः अस्वीकार्य है। एक बार 'मांग' और 'स्वीकृति' के पहलू संदेह से परे स्थापित हो जाने पर, हमारे मत में इस मामले में दो भिन्न दृष्टिकोण की कोई संभावना नहीं रह जाती है; अतः उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण विकृत (perverse) है और उसमें हस्तक्षेप किया जाना अपेक्षित है।

25. तदनुसार, यह आपराधिक अपील स्वीकृत की जाती है, उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय एवं आदेश को निरस्त करते हुए तथा विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय एवं आदेश को पुनर्स्थापित किया जाता है। विचारण न्यायालय को यह निर्देश दिया जाता है कि वह उत्तरदाता को अभिरक्षा में लेने हेतु आवश्यक कदम उठाए और उसे शेष दंडावधि भोगने के लिए कारागार में भेजे तथा उस पर लगाए गए जुर्माने की वसूली करे।

मामले का परिणाम: अपील स्वीकृत

† शीर्ष टिप्पणियां निधि जैन द्वारा तैयार किये गए हैं।

यह अनुवाद पियूष आनंद, पैनल अनुवादक द्वारा किया गया है।